RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल. 0011/2012-14

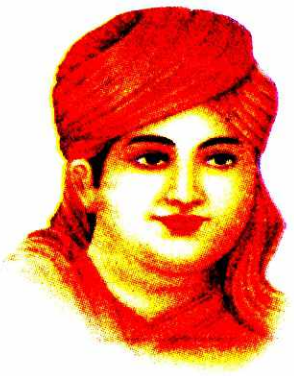

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष: 70 अंक: 13
सृष्टि संवत् 1960853114
30 जून 2013
दयानन्दाब्द 189
वार्षिक : 100 रू.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष–70, अंक : 13, 27/30 जून 2013 तदनुसार 17 आषाढ़ सम्वत् 2070 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

स्वर्गधाम

-ले० डा. रविदत्त शर्मा आचार्य-नई दिल्ली

सुख के लिए प्रयत्नशील होना मनुष्य का स्वभाव है। मानव जाति से भिन्न प्राणी भी ऐसा ही कुछ चाहते हैं परन्तु उनमें पुरुषार्थ का अभाव है। पुरुषार्थी मनुष्य यदि पूर्ण निष्ठा से प्रयत्नशील हो तो संसार में कोई पदार्थ अलभ्य नहीं है। स्वर्ग के सम्बन्ध में मनुष्य कल्पना तो करता है परन्तु उसके स्वरूप से परिचित नहीं है। सुख विशेष को शास्त्रों में स्वर्ग कहा गया है। यदि स्वर्ग मिले तो मनुष्य अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार है। स्वर्ग का रेखाचित्र जैसा कि पुराणों में खींचा गया है वह उसकी रूपरेखा मात्र है। स्वर्ग के लिए कोई स्थान विशेष निर्धारित नहीं है। कुछ लोग भ्रान्तिवश पुराणोक्त स्वर्ग के लिए उद्यम करने लगते हैं, भव्य भवन, अत्याधिक धन, ऐश्वर्य के पूर्ण साधन जुटाने में अपनी पूर्ण योग्यता लगा देते हैं। जब सीमा से अधिक ऐश्वर्य बढ़ जाता है तो चोर-डाकू अपनी दृष्टि उस पर डालते हैं और एक दिन उस पर हमला भी बोल देते हैं। यही स्थिति सन्तान के विषय में भी हो जाती है। सन्तान तो बहुत हो गई परन्तु इस योग्य नहीं बन पाई कि सुख दे सके जिनके पास भूमि अधिक है उन्हें भूमि सम्बन्धी झगड़े तथा अभियोग आदि लगे रहते हैं। अब प्रश्न यह है कि वह स्वर्ग, आशातीत सुख कैसे मिलता है ?

इसका उत्तर छान्दोग्य उपनिषद् में दिया गया है कि निश्चय जो भूमा है वही सुख है, अल्प में सुख नहीं है। सुख भूमा ही है, भूमा की ही विशेष रूप से जिज्ञासा करनी चाहिए।

यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति भूमैव।
सुखं भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति॥ छान्दोग्य० ७-२३

भूमा एक अक्षय कोष है। महान् निरतिशय-बहु ये भूमा के पर्याय हैं। सुख के सभी साधन हमारे जीवन की पूर्ति करते हैं। इन साधनों के बिना जीवनयापन में कठिनाई होगी। अथर्ववेद में इस ओर संकेत दिया गया है कि पोषणसामर्थ्य तथा जीवन साधन बने रहें पोषणकर्ता दूध और घृत से संयुक्त करे। अन्न की तथा पुरुषों की बहुतायत रहे-

त्रयः पोषास्त्रिवृति श्रयन्तामनक्तु पूषा पयसा घृतेन।
अन्नस्य भूमा पुरुषस्य भूमा पशूनां त इह श्रयन्ताम्।
अथर्व० ५-२८-३

वेद में मनुष्य के लिए पूर्ण सुख का प्रावधान है। सब कुछ एकत्रित करने के उपरान्त मनुष्य अपनी सुरक्षा के क्षेत्र में पीछे रह जाता है। ऐश्वर्य जितना बढ़ता जाता है, सुरक्षा भी उतनी ही बढ़नी चाहिए परन्तु अर्जन करते समय यह तो प्रायः भूल ही जाते हैं कि हमें सुरक्षा भी चाहिए। दूसरे प्राणी सुरक्षा को प्राथमिकता देते हैं। वे मिलकर रहते हैं तथा उनमें सामाजिक भावना अधिक पाई जाती है। मनुष्य अकेले ही रहना पसन्द करता है। यह बड़ी भारी भूल है कि हम सुख की प्राप्ति के वास्तविक उपायों को नहीं अपनाते। मन्त्र में जहां अन्न को मांगा है वहां पुरुषों और पशुओं की बहुतायत को भी कहा है। जिस घर में बहुत जने मिल कर रहते हैं उस घर की सदैव रक्षा ही रक्षा है। परिवार में फूट पड़ते ही वह घर सुरक्षित नहीं रहता। हमारी सुरक्षा में पशुओं का भी बहुत बड़ा सहयोग है। पारिवारिक स्वर्ग का स्वरूप कुछ इस प्रकार का बताया गया है-

यस्य पुत्रो वशीभूतो भार्या छन्दानुगामिनी।
विभवे यस्य सन्तोषस्तस्य स्वर्गमिहैव हि॥
चाणक्य० २-३

जिसका पुत्र वश में हो, भार्या आज्ञा का पालन करती हो तथा ऐश्वर्य में जिसे सन्तोष हो; उसका स्वर्ग यहां ही है। इस दृष्टि से स्वर्ग को कहीं खोजने की आवश्यकता नहीं है। एक विचारधारा यह भी है कि स्वर्ग-नरक मरने के बाद मिलता है, तो फिर इस जीवन में प्रयत्न करना ही व्यर्थ है। एक ऋचा में सुख की चर्चा की गई है-

यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते।
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परिस्रव॥
ऋ० ८.११३.११

जहां आनन्द ही आनन्द हो, मौज हो, प्रसन्नता हो, कामनाएं पूर्ण होती हों और अमृतत्व भी हो, वहां रहने की इच्छा प्रकट की गई है। अमृतत्व का भौतिक अर्थ निरापद जीवन तथा आध्यात्मिक अर्थ मोक्ष को प्राप्त करना है। यदि हमारा भौतिक जगत् सुसिद्ध है तो परलोक भी अच्छा होगा ऐसी अपेक्षा की जाती है। यह लोक ही परलोक का निर्माण करता है। वेदोक्त अमृतत्व हमें इस जीवन में भी चाहिए। मनुष्य स्वेच्छा से कभी भी मृत्यु को स्वीकार नहीं करता। अमृतत्व की भावना जीवन को आशावादी बनाती है। जहां-जहां सुरक्षा है वहां-वहां आनन्द है। मनुष्य की कामनाएं कभी समाप्त नहीं होती हैं फिर भी उक्त मन्त्र में निर्दिष्ट बातें होने पर जीवन ठीक प्रकार से व्यवस्थित हो जाता है। भूमा का पर्याय निरतिशय भी है, जिसका अर्थ है कि उससे बढ़कर और कुछ न हो। यही सन्तोष का क्षण होता है। मनुष्य को यदि यह ज्ञान हो जाए कि जो कुछ उसके पास है, उससे बढ़कर कुछ है ही नहीं तो फिर वह कामना ही न करेगा। उपलब्धि के लिए यदि हम शास्त्रों का सहारा लेते हैं तो हम वास्तविक भूमा तक पहुंच सकते हैं। भोगों का आवरण अन्धकार को जन्म देता है। भौतिक संग्रह के चरमोत्कर्ष पर पहुंचकर भी यदि वही प्रवृत्ति बढ़ती रही तो पतन निश्चित है। अविनाशी सुख इस संग्रह से कदापि न मिलेगा। सांख्य दर्शन इस बात को भली-भांति समझाता है कि लौकिक उपायों से ऐसा असम्भव है। रोग की निवृत्ति औषधि से ही हो जाए पहले तो यह निश्चय नहीं और यदि हो भी गई तो भविष्य में वह रोग फिर कभी न होगा ऐसा कोई नियामक नहीं है।

(शेष पृष्ठ 5 पर)

ऋषियों का ब्रह्मास्त्र–वाणी

ले० राजवीर आर्य मुरादनगर

आर्य बन्धुओं ! हम सभी मानवीय स्वभावानुसार सदैव संदेशों के आदान-प्रदान में उद्यत रहते हैं। संदेश जीवन की आवश्यकता, भावना और विश्वास के प्रतीक होते हैं। जड़-चेतन के यही संदेश मानवीय जीवन में भविष्य के मार्गदर्शक होने से विकास का महत्वपूर्ण आधार होते हैं। बहती पवन का संदेश, काली घटाओं का संदेश, उमड़ती नदियों, कूकती कोयल, नाचते मोरों का संदेश, भौंरे के भानु-रात के चन्द्र का संदेश, नन्हीं मुस्कराहट से जीवन के अंतिम समय तक सर्वत्र संदेशों का संसार नजर आता है। जड़ प्रकृति और जीव जगत के नियमित (स्वाभाविक) संदेश प्रभु आश्रित जानकर विद्वानों ने भी वेदानुसार कहा ''गायन्ति त्वागायत्रिणी ऋ . 1/10/1 हे प्रभो गवैया तेरे ही गीत गाते हैं। ''वाचं धेनुमुपासते'' वाणी ही की उपासना करते हैं। किंतु मानवीय शिक्षा के लिए प्रकृति संदेशों को ममतामयी माँ के दुलार को, पथ-पथिक के नाम को, गणित की गिनती ही क्या, धरती से सितारों तक मानवीय प्रगति के इतिहास की विश्वसनीयता शब्दों से ही है। इस प्रकार जन्म से मृत्यु पर्यन्त व्यवहार को सुरक्षित रखने में शब्द ही सक्षम है। बिना शब्द ज्ञान के सृष्टि का कोई अस्तित्व नहीं, पदार्थ शब्द-अर्थ से उत्पन्न भावना के अभाव में जीव और जगत का संबंध नहीं क्योंकि ''नाम और नामी'' ''शब्द और वस्तुरूप'' जगत का अटूट संबंध है जो मनुष्य उत्पत्ति के संग शब्द ज्ञान और आत्मिक उद्‌गारों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा उत्पत्ति को सिद्ध करता है। मानव बुद्धि विकास का मूल शब्द वाणी ही है। प्रमाणत: व्यास जी कहते हैं-

अनादि निधना नित्या, वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आद्यौ वेदमयी दिव्या यत: सर्वा: प्रवृत्य:।।

महा.श.पर्व 223/24

सृष्टि के प्रारंभ में परमेश्वर ने अनादि, नित्या, दिव्य वेदवाणी को रचा जिससे संसार के सारे व्यवहार प्रारम्भ हुए। इस प्रकार वस्तुरूप जगत और जीव का व्यावहारिक संबंध भाषा से सिद्ध है।

बन्धुओं, प्रभु द्वारा सृष्टि रचना की सफलता भाषा से, विद्वान, महात्मा, दुरात्मा सभी का परिचय और निर्णय शब्दों से कर्म भावना, सृष्टि लाभ और विकास की व्याख्या शब्दों से, सांसारिक स्मृति भावना और भविष्य के संस्कारों की सिद्धि शब्दों से ही है, फिर शब्द सा सनातन कौन है ? शब्द के बिना मूर्ति सनातन का क्या नाम, अर्थ और भाव होगा अर्थात कुछ भी नहीं। शब्द का देश-काल परिवर्तन से लोप नहीं। सदा से नवीन-वर्तमान का पूरक सांसारिक परिवर्तन बाद भी किसी बल से अंत और परिवर्तन नहीं। परिणामत: शब्दों से ही पूर्व जन्मों की संस्कार स्मृतियों को गोल्डस्मिथ, भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने कविता के सुरों को सजाया। जॉन स्टुअर्ट मिल ने शब्दों से ही रोम के प्राचीन इतिहास को पृष्ठों पर साकार करके पुनर्जन्म और भाषा ज्ञान को भी प्रमाणित किया। जैसा कि प्राचीन शब्द विज्ञान के प्राचीन तत्वद्रष्टा महर्षि पाणिनी ने भी लिखा है-

अक्षरं नक्षरं विद्याद श्रोतर्वा सरोऽक्षरम्। महा. 1/1/5

अर्थात् अक्षर जो सर्वत्र व्यापक है जिनका कभी विनाश नहीं सो (शब्द) नित्य ही है। अत: कोई किसी को नया ज्ञान नहीं सिखाता मात्र भूले आत्मिक ज्ञान की याद दिलाता है।

यही सनातन शब्द आत्मिक प्रेरणा साधन और आदर्श विश्वास के जनक हैं। इस प्रकार सांसारिक और पारमार्थिक सुखों के लिए शब्द ज्ञान वर्णोच्चारण शिक्षा का उपदेश आवश्यक है। ऋषियों का कथन है कि-

''तमक्षरं ब्रह्मपरं पवित्र गुहाश्यं सम्यगुशन्ति विप्रा:।
स श्रेयसा चाभ्युदयेनचैव सम्यक प्रयुक्त पुरुष युनक्ति''

अर्थात् विद्वान लोग उस आकाश-वायु प्रतिपादित, नाश रहित विद्या सुशिक्षा सहित बुद्धि में स्थित अत्युत्तम शुद्ध शब्द राशि की अच्छे प्रकार प्राप्ति की कामना करते हैं, और वही अच्छे प्रकार प्रयोग किया हुआ शब्द शरीर, आत्मा, मन और स्व संबंधियों के लिए संसार के सब सुख तथा विद्यादि शुभ गुणों और मुक्ति सुख से मनुष्य को युक्त कर देता है। इसीलिए इस वर्णोच्चारण की श्रेष्ठ शिक्षा से विज्ञान में सब लोग प्रयत्न करें, क्योंकि जड़-चेतन, भूत-भविष्य के सुखद व्यवहार के ज्ञानदाता सनातन शब्द ही है।

विद्वानों के उपदेशानुसार शब्दार्थ भाव और ध्वनि प्रयोग विज्ञान से प्रभावित समाज हितैषी शब्द विज्ञान के मर्मज्ञ मैसूर निवासी गणपति सच्चिदानंद जी ने ध्वनि तरंग की व्यापकता, उष्मा की प्राप्ति मधुर और कर्कश स्वरों से सुख-दु:ख अनुभूति के प्रभाव का चयन करके वाद्यों द्वारा भिन्न-भिन्न रोगियों को स्वास्थ्य लाभ कराकर ध्वनि की भौतिक शरीर पर प्रभावी क्षमता को ''साउन्ड थैरेपी'' नाम से अलंकृत किया।

आर्यजनो, प्रवाह से समस्त पदार्थीय गुण धर्म व्यवहार से आत्मा और रूप से भौतिक जगत को प्रभावित करते हैं, वैसे ही शब्दार्थ भाव का आत्म से और वाणी ध्वनि रूप का भौतिक जगत से अटूट संबंध है। शब्दार्थ और ध्वनि एक-दूसरे के पूरक हैं। जीव मन से वाणी को धारण करता है। उस शब्दमयी वाणी को प्राण शरीर के मध्य वर्तमान होकर प्रेरित करता है। प्रकाशमान मन की स्वामिनी, आकाश को प्राप्त होने वाली उस शब्द सनातन रूप वाणी की क्रान्त दर्शन किरणें अथवा वायु के कम्पन जल स्थान में सुरक्षित करते हैं। ऋ. 10/166/2 वैज्ञानिक प्रयोगों से प्रमाणित ध्वनि वायुमण्डल में प्रतिक्षण दस लाख तरंगें उत्पन्न करती है जो उष्मा और गति का मूल स्रोत है। गौतमीय तन्त्रानुसार-

व्यापिनी व्योमिरूपा: स्युरनन्ता स्वरशक्त्य:।।

गौतमीय तंत्र 9-26

अर्थात् स्वर की शक्तियाँ आकाशवत व्यापक और अनन्त हैं।

यथा वायु घर्षण से बादलों में विद्युत, समुद्र में ज्वारभाटा, वनों में आग ध्वनि तरंगों का ही परिणाम है। वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध होता है कि निरंतर 130 डेसिबल ध्वनि से बहरापन, 150 से त्वचा का जलना, 180 डेसिबल ध्वनि से मृत्यु भी संभव है। ऐसा जानकर सेना को बर्फीली पहाड़ियों और नदियों के पुल पर वाद्य और परेड वर्जित है। ध्वनि की व्यापकता से प्रभावित ऋषियों ने कहा-समस्त पदार्थ तुला के एक पलड़े में रखे जाएं फिर भी वाणी का पलड़ा भारी है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने वाणी को ''वाग वै विश्वकर्मा'' ''वाग्वै कामधेनु'' कहा है। ''यावत ब्रह्म तिष्ठति तावती वाक'' जहाँ तक ब्रह्म तत्व व्यापक है वहाँ तक वाक तत्व का विस्तार है। यही नाद ओंकार स्वरूप है। मनीषी इसे 'ब्रह्म' कहते हैं। जैसे यह नाद गुप्त रूप से ब्रह्माण्ड में व्याप्त है वैसे प्राणियों के शरीर में भी व्याप्त है। ऐसा जानकर ऋषिवर गौतम वाक्य है-प्राणो वै स्वर:-स्वर ही प्राण हैं। ता. 24-11-9

इसी से ब्रह्म प्राप्ति में संलग्न ज्ञानियों ने ब्रह्म यज्ञ (सन्ध्या) में प्राथमिकता से वागन्द्रिय को जल से संस्कारित करके शब्द रूप गुरूमन्त्र विचार शक्ति के विकास हेतु शब्द रूप गुण द्वारा ब्रह्म प्राप्ति की घोषणा की है, जिसका वर्तमान में विकृत रूप गुरूडमवादियों का अर्थरहित गुरूमन्त्र शेष है। इस प्रकार पारमार्थिक अध्यात्म सुख हेतु ब्रह्म से प्यार और सांसारिक सुख हेतु शारीरिक उपकार दोनों वाणी के आश्रित हैं।

किन्तु यह तभी संभव है जब हम शब्द के मूल भावार्थ अनुकूल व्यवहार धर्म का पालन वेद मन्त्रानुसार करें। वेद का कथन है-

''ऋचो अक्षरे परमे व्योमन यस्मिन्द्रवा अयि विश्वे निषेदु:।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यते य इत्तद्विदुस्त इमे सभासते।।'' 1/164/39

अर्थात् ऋचाएं परम अविनाशी ''शब्दमय'' अक्षर में ठहरी हैं। जिनमें देवता अर्थात् शब्द के अर्थ (विषय) निश्चित हैं, जो उस अक्षरार्थ (विषय) को नहीं जानता वह ऋचाओं से क्या लाभ प्राप्त करेगा ?

आज शब्द मर्यादा के विरूद्ध आचरण ही मानव की अधोगति का कारण बन रहा है। महाभारत युद्ध के बाद क्षणिक स्व लाभ से प्रेरित हम शब्दों के अर्थ अपने अनुकूल करने लगे हैं। जिससे सिद्धान्तहीन रूढ़िवादी मानसिक प्रदूषण वैचारिक हिंसा ही समाज में अधर्म और अविश्वास का मुख्य कारण है।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

सम्पादकीय.....

मनुष्यता का अमर सन्देश

आर्य समाज के दस नियम

आर्य समाज के दस नियम ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित, विश्व में शान्ति के सन्देश वाहक और धर्म के अग्रदूत आर्य समाज के सिद्धान्तों का मूल संग्रह है। जैसे दस इन्द्रियों से शरीर चलता है, वैसे ही ये भी आर्य समाज की दस इन्द्रियां हैं। ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित दशकं धर्मलक्षणम् हैं और शान्ति के घोषणापत्र की ये आधारभूत शिलायें हैं। ये वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर ही निश्चित किये गये हैं। इसलिए आर्य वेदान्त के जिज्ञासु, आर्यधर्म और आर्य संस्कृति के भक्तजन, इन नियमों के गम्भीर अनुशीलन से मानव जीवन को ऊँचा उठाने वाले उन सत्य आदर्शों का सम्यग् ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और मानवता के धर्म का वास्तविक मर्म पहचान सकते हैं, जिनसे अभ्युदय और नि:श्रेयस का मार्ग साफ हो जाता है तथा इहलोक एवं परलोक सुधरते हैं।

उस ऋषि की चर्मचक्षु के सामने भारतवर्ष की दुर्दशा और नाना रूपों वाली पराधीनता थी। परन्तु उसके मानसचक्षु उस दिव्यदृष्टि से आलोकित थे, जिनसे विश्वरूप संदर्शन होता है। इसलिए उसने जो कुछ सोचा, जो कुछ लिखा, जो कुछ कहा और जो कुछ किया, वह समस्त विश्व के हित की भावना से ही था। इस पर आचरण करने से सबका उद्धार हो सकता है। उसके द्वारा निर्धारित धर्म ऐसा है जो सर्वोदय कर सकता है, अशान्त क्षुब्ध विश्व को शान्ति दे सकता है। मतमतान्तरों के झगड़े और अर्थकाम में आसक्ति के कारण स्वार्थ की वृद्धि ये दो कारण हैं जिनसे सर्वत्र असन्तोष और परस्पर अविश्वास फैलता है। ऋषि ने कहा इसके निवारण के लिए मनुष्यता को छोड़कर नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय । मनुष्यता क्या है? धर्मानुकूल आचरण, परहित के लिए स्वहितत्याग और सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझ, व्यक्ति की पूजा का त्याग और सब भूतों में महान् आत्मा के सूत्र का ग्रहण, मतमतान्तरों में आग्रहबुद्धि का पूर्ण परित्याग और सदा सत्यग्रहण एवं असत्यत्याग में निसंकुचित तत्परता। इन्हीं के संग्रहरूप में ऋषि ने दशसूत्रों में सब कुछ कह दिया है।

यदि सब मनुष्य सब सत्यविद्या का आदि प्रेरक परमेश्वर को मान ले तो व्यक्तियों के नाम पर चलें मतसिद्धान्त सम्प्रदाय मिट जावें और धर्म का प्रचार हो। ऐसे ही जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उनका आदि मूल परमेश्वर को समझे तो निरभिमान होकर उदार बने। यह तभी हो सकता है यदि मनुष्य उस परमेश्वर के सत्स्वरूप को जान लें और यह समझ लें कि उसी की उपासना करनी योग्य है। व्यक्तियों की पूजा करना, अज्ञान और मतमतान्तर के झगड़े खड़ा करना है।

ऐसी स्थिति में आने के लिए ऐसा ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, जो सब कालों में, सब अवस्थाओं में एक सा हो। इसलिए तीसरे नियम में वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। यदि सब इनकी शिक्षाओं के अनुसार आचरण करें तो फिर मतमतान्तरों के झगड़े और अर्थ काम से आसक्ति के कारण बढ़ी स्वार्थ बुद्धि दोनों पनपने न पावें। यदि सब मनुष्य, सब देशों के नेता सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहें तो फिर मतमतान्तरों के झगड़े और बुराई पैदा ही कैसे हो? फिर सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर ही हों। जब ऐसा हो गया तो सब दलबन्दी समाप्त। जो भी व्यक्ति शासन करेंगे उनका परीक्षण उनका सत्य और असत्यमय आचरण होगा। यदि वह असत्यमय होगा तो उसके छोड़ने में तत्पर रहेंगे। परिणामत: विश्व के सभी नेता आप्त धार्मिक, सत्यदर्शी, सत्यमानी, सत्यवादी सच्चरित्र परोपकारी होगें। जब सर्वत्र सत्यवादियों का शासन और मान होगा तो मत मतान्तर कहां रहेंगे। तब सबका मुख्य उद्देश्य अपने पार्टी हित से हटकर संसार का उपकार करना अर्थात् शारीरिक आत्मिक और समाजिक उन्नति करना होगा। जहां भी, जैसा भी, जिसे भी कष्ट होगा, सब उसे मिलकर निवारण करने में लग जाऐंगे। इस प्रकार सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तने के भावों का विकास होगा। मनुष्य मनुष्य से प्रीति करेगा, अच्छे बुरे को समझ कर यथायोग्य धर्मानुगामी बनेगा। दुनियां की राजनीति से अन्याय नष्ट होगा। आज संसार अज्ञान के कारण भटक रहा है इसलिए अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए। पार्टी बाजी और मत मतान्तर अविद्या के कारण हैं मनुष्य का अर्थ काम में आसक्त होना अविद्या मूलक ही है। जब अविद्या अन्धकार मिट जाएगा तो सब कहेंगे, भाई! देखो प्रत्येक को अपनी उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

ऐसा सदाचार नियम हो जाने पर, सबकी शिक्षा दीक्षा इस नीति पर होने से, सब एक दूसरे का ख्याल करेंगे। शोषण बन्द हो जाऐगा, भ्रष्टाचार खत्म हो जाऐगा, सब मनुष्य एक दूसरे को मित्र भाव से देखेंगे। अगर ऐसी स्थिति को निरन्तर स्थिर रखना है तो सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें इसका सबको निरन्तर अभ्यास करना चाहिए।

यही मनुष्यता का अमर सन्देश है जिसे सृष्टि के आदि में परमात्मा ने चार ऋषियों को दिया था, जिसे मनु महाराज ने क्रम बद्ध किया था और जिसे एक बार फिर वर्तमान युग में सुचेता सुक्रतु ऋषि दयानन्द ने संसार को देने के लिए इन दश-नियमों के रूप में आविर्भूत किया है। इन दस नियमों के ऊपर चलने वाला प्रत्येक मनुष्य आर्य बन सकता है। ये दस नियम वेद धर्म रूप पुष्प की क्रमबद्ध पंखुड़ियाँ है, जिनकी सुमधुरवास से पाप और दु:ख की दुर्गन्ध कट जाती है।

-प्रेम भारद्वाज सम्पादक एवं सभा महामंत्री

उत्तराखंड में भयंकर त्रासदी से मरने वालों को श्रद्धांजलि

उत्तर भारत के विभिन्न हिस्सों में भीषण वर्षा और बाढ़ से मची भयानक तबाही ने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया है। यह प्राकृतिक आपदा नहीं है, बल्कि अंधाधुंध विकास के नाम पर प्रकृति के साथ किए गए अत्याचार का प्रतिकार है। उत्तराखंड में हुई इस भयंकर तबाही से हजारों लोगों की मृत्यु के अलावा अभी तक विभिन्न स्थानों पर हजारों की संख्या में लोग फंसे हुए हैं और असंख्य लापता है जिनका भयंकर बाढ़ में बह जाने का अंदेशा है। उत्तराखंड में सर्वाधिक तबाही केदारनाथ में हुई है। चारों ओर बिखरे मलबे के सिवाय कुछ नहीं बचा और इस मलबे में कई लोगों के दबे होने का भी अंदाजा लगाया जा रहा है। केदारनाथ, रामबाड़ा और गौरीकुंड तबाह हो गए हैं और केदारनाथ घाटी में साठ गांवों का कोई पता नहीं। इसके साथ रुद्रप्रयाग, चमोली और उत्तरकाशी भी तबाह हो गए हैं। केदारनाथ में ही कई धर्मशालाएं ध्वस्त हो गई हैं।

उत्तराखंड में बाढ़ की त्रासदी के रूप में देश के सामने जैसा अचंभित कर देने वाला संकट खड़ा हो गया है वह सिर्फ एक दैवीय आपदा भर नहीं है। प्रकृति का यह रौद्र रूप चेतावनी देने के साथ-साथ हमें अपनी जिम्मेदारी का अहसास कराने वाला है कि अगर अब भी हम जागरुक नहीं हुए तो आगे भी ऐसी ही प्राकृतिक आपदाओं से जूझना पड़ सकता है।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के समस्त अधिकारी तथा सदस्यगण इस भयंकर त्रासदी में मरने वालों की आत्मा की शांति के लिए परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं तथा उनके परिवार के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं। जो लोग अभी भी दुर्गम स्थानों में फंसे हुए हैं, परमपिता परमात्मा उन सबकी सहायता करें, ताकि वे सकुशल अपने-अपने घरों तक पहुंच सके। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब बाढ़ पीड़ितों तथा इस त्रासदी का शिकार हुए लोगों की तन-मन-धन से सहायता करने के लिए हर संभव प्रयास करेगी।

स्वाध्याय से ध्यान-समाधि-मोक्ष प्राप्ति तक का सफर

-ले० श्री मनमोहन कुमार आर्य, 196 चक्खूवाला, देहरादून

मनुष्य जीवन का लक्ष्य ईश्वर का साक्षात्कार कर मोक्ष की प्राप्ति है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानना आवश्यक है। आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय से ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान करने के पश्चात् उसका ध्यान व चिन्तन कर स्वात्मा को ईश्वर में समर्पित करना होता है। इस समर्पण की अवस्था में इन्द्रियों को विषयों से सर्वथा पृथक करके मन व आत्मा से ईश्वर के स्वरूप का ध्यान करते हुए उसमें निरन्तरता लाई जाती है। किसी भी अवस्था में मन अन्य किसी सांसारिक विषय को ध्यान में उपस्थित न करके लम्बी अवधि तक यदि वह केवल ईश्वर में ही स्थित रहता है तो यह समाधि की अवस्था होती है। इस समाधि की अवस्था को प्रत्येक स्वाध्यायकर्ता व ध्याता को प्राप्त करना चाहिए। ध्यान व समाधि की प्राप्ति के लिए आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय अपरिहार्य है। यदि हम ईश्वर के सत्य स्वरूप को नहीं जान पाएंगे और जान लेने पर भी ध्यान नहीं करेंगे तो ईश्वर की प्राप्ति अर्थात् ईश्वर का साक्षात्कार सम्भव नहीं है। स्वाध्याय एक प्रकार से समाधि की बुनियाद या आधार शिला है। जो भी व्यक्ति ईश्वर को प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए। महात्माओं के प्रवचन व उनका प्रशिक्षण भी ईश्वर की प्राप्ति में सहायक होता है यदि वह उपदेशक-गुरु ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानता हो और उसका अपना निजी कोई स्वार्थ न हो। आजकल के गुरुओं में से अनेक भक्तों को अपना चेला या अन्धभक्त बनाने के चक्कर में लगे हैं। उनसे ये आशा नहीं की जा सकती कि वह भक्तों को सही मार्गदर्शन दे सकेंगे। अनेक गुरु तो ऐसे हैं जो स्वयं ही सांसारिक प्रलोभनों के शिकार हैं। वह ईश्वर का आधा अधूरा किताबी थ्योरोटिकल ज्ञान ही रखते हैं। उन्हें न तो प्रायोगिक ज्ञान का अभ्यास है और न इसमें उनकी प्रवृत्ति व रूचि है। प्राय: ईश्वर की प्राप्ति के लिए प्रयासरत व्यक्ति ऐसे छद्म गुरुओं के बीच फंस जाता है जिसे न तो ईश्वर की प्राप्ति होती है और न उसका जीवन ही संवर पाता है। अत: स्वयं के प्रयासों से स्वाध्याय करने में ऐसे खतरे काफी कम हैं। यदि हमें पात्र विद्वानों, अपने मित्रों व शुभ चिन्तकों से स्वाध्याय की अच्छी पुस्तकों की ही सही जानकारी मिल जाए और आवश्यकता पड़ने पर हमें किसी योग्य प्रशिक्षक या गुरु, जो एक साधारण गृहस्थी या व्यवसायी भी हो सकता है, उसकी सहायता से हमारा कल्याण हो सकता है। इस लेख में हम यह भी बताने का प्रयास करेंगे कि स्वाध्याय के लिए उपयोगी ग्रन्थ कौन से हैं जिनका अध्ययन कर मनुष्य ईश्वर के साक्षात्कार तक पहुंच सकता है।

स्वाध्याय का आरम्भ करने से पूर्व सभी स्वाध्यायप्रेमी अध्येता बन्धुओं को अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेना चाहिए। यदि वह ईश्वर व स्वयं की आत्मा को जानना चाहते हैं तो हमें इसके लिए संकल्पपूर्वक ऐसे ग्रन्थों का चयन करना होगा जिसमें इस विषय का सर्वांगपूर्ण ज्ञान हो, भाषा सरल हो व पाठक की समझ में आ जाए। यदि ऐसा हो जाता है तो अध्ययन आरम्भ करने पर ईश्वर व आत्मा के बारे में ज्ञान प्राप्त होना आरम्भ हो जाएगा और जैसे-जैसे स्वाध्याय में प्रगति होगी, पाठक-अध्येता के ज्ञान में भी प्रगति होगी। स्वाध्याय के साथ-साथ अध्येता या स्वाध्यायीजन को ग्रन्थों में उल्लिखित प्रमुख व महत्त्वपूर्ण गूढ़ बातों पर ध्यान केन्द्रित कर उसको बार-बार दोहराना चाहिए जिससे वह स्मरण रहें और आगे जहां उनका उल्लेख आए, वह उसे समझ सकें। एक समय का अध्ययन या स्वाध्याय कर लेने के पश्चात् आंखें बंद कर किसी एक आसन में ध्यान की अवस्था में बैठ जाना चाहिए और पूर्व स्वाध्याय किए विषय एवं ईश्वर व आत्मा के स्वरूप को स्मरण कर उस पर अपना ध्यान केन्द्रित कर इन सबको और गहराई में उतर कर समझने की चेष्टा करनी चाहिए। जैसे-जैसे स्वाध्याय व विचार एवं चिन्तन बढ़ता जाएगा, साधक का स्तर ऊंचा होता जाएगा। ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान व साक्षात्कार होने का काल कम होता जाएगा और साधक को एक लाभ यह भी होगा कि स्वाध्याय व साधना में रूचि में वृद्धि होगी। अब ऐसी स्थिति आ सकती है कि जब बिना स्वाध्याय व चिन्तन के उसे भोजन और निद्रा भी अच्छी न लगे। यदि इस प्रकार की साधक की स्थिति होती है तो यह उसके लक्ष्य के निकट पहुंचने का प्रतीक है। इस अवस्था में पहुंचने पर या इससे पहले ही उसे अपने पुराने मित्र जिनकी स्वाध्याय, आध्यात्म व ध्यान साधना में विशेष रूचि नहीं होती, अच्छे नहीं लगते क्योंकि वह अनुभव करता है कि उनकी उपस्थिति और उनकी फिजूल की बातों से उसके स्वाध्याय व ध्यान में बाधा होती है, लाभ कोई नहीं परन्तु हानि होती है। अत: कुछ समय बाद उन पुराने साथियों से उसका सम्बन्ध कमजोर होने लगता है। इधर उसकी आध्यात्म में प्रगति होती है और उधर पुराने साथियों से उसका सम्बन्ध लगभग समाप्त हो जाता है जिसका कारण साथियों को स्वाध्याय व ध्यान साधना अच्छी नहीं लगती और इस साधक को स्वाध्याय व ध्यान को छोड़ने में अपनी बहुत बड़ी हानि का अनुभव होता है।

स्वाध्याय से ध्यान, समाधि व ईश्वर की प्राप्ति आदि ऐसे लाभ होते हैं जो अन्य किसी प्रकार से नहीं हो सकते। उदाहरण के रूप में हम ध्यान व समाधि के विषय में विभिन्न योगियों, विद्वानों और सन्यासियों के अनुभवों का अध्ययन करते हैं। सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय से यह भी ज्ञान होता है कि यदि हम एक व्यक्ति को ही गुरु बनाएंगे तो अन्य विद्वानों व योगियों आदि पात्रों की उपेक्षा करेंगे तो ऐसा करके हम बहुत सारे लाभों व ज्ञान से वंचित हो जाएंगे। अत: हमारा मानना है कि कभी भी किसी अध्येता, उपासक व योगी को अपने मन से यह विचार निकाल देना चाहिए कि वह अपने किसी एक गुरु के अतिरिक्त अन्य ऋषियों, योगियों या विद्वानों के ग्रन्थों का स्वाध्याय नहीं करेगा। हम तो यहां तक कहेंगे कि यदि किसी ऐसे व्यक्ति ने कुछ लिखा है जिसे सामान्यत: सुधीजन अस्वीकार करते हैं तो उसे भी पढ़ लेने और उसको अस्वीकार करने वाले विद्वानों की आपत्तियों को देख कर समझ लेने में लाभ ही है, हानि कुछ नहीं। इससे हमारा पूर्व अध्ययन किया हुआ ज्ञान स्थिर व स्थाई होता है। हां, इतना आवश्यक है कि व्यक्ति जितना अध्ययन करता है उससे अधिक उसे योगाभ्यास कर ध्यान व चिन्तन करना चाहिए तो उसे बहुत अधिक लाभ होने की सम्भावना है। यदि केवल पढ़ता ही पढ़ता है, यह बुरा तो नहीं, परन्तु ध्यान व चिन्तन में समय न लगाने से जो बहुत अधिक लाभ हो सकता है, उससे वह वंचित हो जाता है। अत: प्रत्येक स्वाध्यायशील व्यक्ति को स्वाध्याय के साथ-साथ साधना अर्थात् ध्यान व चिन्तन भी अवश्य करना चाहिए।

अब तक हमने स्वाध्याय के विषय में कुछ जाना है। स्वाध्याय से ईश्वर व स्वयं अर्थात् अपनी आत्मा का स्वरूप व ईश्वर की प्राप्ति के उपाय जान लेने के पश्चात् ध्यान व समाधि के विषय में भी जानना होता है जो स्वाध्याय से ही जाना जाता है। ध्यान से पूर्व धारणा की जाती है। चित्त को एक लक्ष्य विशेष में बांध देने, वहां उसे रोकने और टिकाने को ''धारणा'' कहते हैं। ऐसा करना ईश्वर का ध्यान करने के लिए और उसकी प्राप्ति के लिए आवश्यक है। धारणा को स्थिर करके ध्यान करना होता है। ध्यान क्या है ? ध्यान, ध्येय विषय अर्थात् ईश्वर, जिसे चित्त में धारण किया हुआ है, उसकी अर्थात् ईश्वर की वृत्ति निरन्तर उदय होती रहे, उसमें विषयान्तर की वृत्ति का नितान्त भी उदय न हो, विषयान्तर से सर्वथा अछूता रहे, ध्यान की अवस्था में एकमात्र ध्येय ही चित्त का आधार बना रहे, यह ''ध्यान'' का स्वरूप है।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

योग निद्रा—नींद की संजीवनी

-ले० डॉ० एच. कुमार कौल डायरैक्टर गांधी आर्य सीनियर सैकंडरी स्कूल बरनाला

इस आधुनिक युग में मानवीय जीवन की कोई एक खास विशेषता या पहचान बतानी पड़ जाए, तो 'तनाव' से बेहतर कोई शब्द नहीं हो सकता। तनाव की शुरुआत दुनिया में आते ही शुरू हो जाती है। उम्र के साथ-साथ तनाव भी बढ़ते जाते हैं। असन्तोष और असन्तुष्टि तनाव का सबसे बड़ा कारण है। कुछ खोने का भय, वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण बढ़ती आराम तलबी और सबसे प्रमुख सामाजिक व्यवस्था का विघटन, मानवीय रिश्तों का कमज़ोर होना और परिवार की अनुपस्थिति आदि ने हमें अनिद्रा का शिकार बना दिया है। इतना ही नहीं, 'टारगेट' नामक शब्द ने हमसे हमारी नींद छीन ली है। बच्चों के सिलेबस का टारगेट पूरा करना है। युवाओं को करियर का टारगेट आदि-आदि लेकिन अच्छी सेहत के लिए नींद का टारगेट पूरा करने की सलाह देते हैं। आजकल काम के घंटे बढ़ गए हैं और नींद के घंटे घट गए हैं। सामान्य तौर पर बच्चों को आठ घंटे और वयस्कों को कम से कम छह घंटे सोना चाहिए। जो लोग पर्याप्त मात्रा में नींद नहीं लेते अथवा जिन्हें नींद नहीं आती उन्हें अनेक बीमारियां जैसे-मोटापा, डिप्रेशन और हाई ब्लड प्रेशर से लेकर दिल से जुड़ी अनेक बीमारियां अपनी आगोश में ले लेती हैं। बीमारियों से बचाव के लिए दूध-बादाम से ज़रूरी है अच्छी नींद। न्यूयार्क यूनिवर्सिटी में स्लीप डिसआर्डर प्रोग्राम के डायरैक्टर एम. डी. रेपोपोर्ट कहते हैं-"अच्छी याददाश्त के लिए नींद बहुत ज़रूरी है।" हार्वर्ड यूनिवर्सिटी और बोस्टन कॉलेज के शोधकर्त्ताओं ने पाया कि नींद दिमाग को पर्याप्त आराम देकर रचनात्मक स्तर को बढ़ाती है। नींद की कमी से बच्चे लापरवाह, अधीर और सामान्य से अधिक सक्रिय होने लगते हैं। इसके अतिरिक्त शरीर एक प्राकृतिक मशीन है। काम के बोझ से इसे ओवरलोड कर दिया जाए तो इसमें खराबी आना स्वाभाविक है। तनावयुक्त मांस-पेशियां, अनियमित सांस, बैचेनी, निराशा, अधिक गुस्सा आना, भूलना तर्कपूर्ण फैसले न ले पाना आदि मानसिक रोग हो जाते हैं।

नींद के लिए नींद की नशीली दवाइयां देते हैं। परन्तु ये दवाइयां कुछ समय तो असर करती हैं परन्तु व्यक्ति धीरे-धीरे इनका आदी हो जाता है तो असर करना बन्द कर देती हैं और शारीरिक और मानसिक हानि पहुंचाने लगती हैं। ये दवाइयां चिरस्थायी इलाज नहीं है। गहरी सांसें लेना, सकारात्मक सोच, ध्यान यानि मैडिटेशन, पौष्टिक आहार आदि नींद लाने में सहायक होते हैं। परन्तु यदि हम गहरी नींद लेना चाहते हैं और शारीरिक और मानसिक रोगों से हमेशा के लिए मुक्ति चाहते हैं तो उसके लिए संजीवनी है-योग निद्रा।

योग निद्रा चंचलता, तनाव, अवसाद, निराशा, बैचेनी, अशांति, क्रोध आदि रोगों के साथ-साथ उच्च रक्तचाप (हाई ब्लड प्रैशर), थकान, मांसपेशियों में खिंचाव, हृदयरोग, सिर, गर्दन, कंधों का दर्द आदि शारीरिक रोगों का उत्तम उपाय है। अनिद्रा के रोगी इससे बहुत लाभान्वित होते हैं। योग निद्रा की अनेक तकनीकें हैं इनमें प्रमुख हैं-शवासन।

आवश्यकता व समय की उपलब्धता के अनुसार योग-निद्रा की प्रक्रिया 10-15 मिनट से लेकर 1 घंटे या उससे अधिक भी की जा सकती है। योग निद्रा से पाचन क्रिया कुछ देर के लिए मंद हो जाती है। अत: भरपेट भोजन के बाद योग-निद्रा की जा सकती है। योग निद्रा में शरीर व मन अत्यन्त शिथिल, शान्त व विश्राम की स्थिति में होते हैं। अत: नींद लग जाने की सम्भावना रहती है। अत: अपने आप को मानसिक रूप से जागरुक बनाए रखना चाहिए।

विधि-एक नर्म दरी पर या कम्बल पर पीठ के बल लेट जाए। बाहों को शरीर से दूर टिका दें। हथेलियों को ऊपर की ओर करें और पैरों को थोड़ा सा एक दूसरे से दूर रखें। आंखों और मुंह को बन्द रखें और चेतना को धीरे-धीरे पैरों, नलियों, घुटनों, पेट, छाती, गर्दन और चेहरे से अलग रखें। अन्त में धीरे-धीरे गहराई तथा ताल से श्वास क्रिया करें। इस आसन की अन्तिम स्थिति में अभ्यासी को अपना शरीर गतिहीन और मृतक लगना चाहिए। उसको ऐसा अनुभव होना चाहिए कि वह धरती में धंस रहा है। फर्श पर लेटना, आंखों को बन्द करना और धीरे-धीरे श्वास क्रिया इस आसन में अत्यन्त आवश्यक है। इसमें एकाग्रचित्त होने की शक्ति बढ़ जाती है और उसमें पूर्ण विश्राम और शान्ति मिलती है।

लाभ-शवासन पूर्ण शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विश्राम तथा ताज़गी के लिए उत्कृष्ट आसन है। तनाव और दोषयुक्त श्वास क्रिया से बहुत सारे रोग जन्म लेते हैं। तालपूर्ण श्वास क्रिया शरीर और मन के लिए बहुत ही लाभदायक है। इस आसन से सारा मानसिक तनाव और दबाब दूर हो जाता है। शारीरिक थकावट दूर होती है। सारे नाड़ी तन्त्र को बल मिलता है। इससे शरीर के सारे विषैले पदार्थ निकल जाते हैं। शरीर के अंगों में प्राणों का पुन: संचार हो जाता है। उच्च रक्तचाप, नाड़ी से सम्बन्धित अव्यवस्था और चिन्ता तथा तनाव आदि अनेक बीमारियों की चिकित्सा हो जाती है। जब ये आसन अच्छी प्रकार से किया जाता है तो ये आराम और शान्ति देता है तथा शरीर और मन को विश्राम प्रदान करता है। योग-निद्रा को अक्सर 'सजगता वाली नींद' भी कहा जाता है।

पृष्ठ 1 का शेष-स्वर्गधाम.....

भूमा जिसका नाम है वह तो अलौकिक ऐश्वर्य है। भौतिक भूख से तृप्त होकर मनुष्य उस आध्यात्मिक की खोज में लग जाए जो सुख का मूल है। परमेश्वर के द्वारा सब कुछ मिलता है यदि इतनी बात हम समझ सकें तो पार्थिव उपासना में ही जीवन को नष्ट न करें। भूमा तो थोड़ा विचार करते हैं। शास्त्रों में उल्लेख है कि आध्यात्मिक ऐश्वर्य योगियों को मिलता है; इससे स्पष्ट हो जाता है कि सांसारिक चमक-दमक में न उलझ कर साधना का मार्ग अपनाना ही श्रेयस्कर होगा। इन्द्रियां सेवक हैं, उनका स्तर सेवक जैसा ही होगा। इन्हें एक बार पूर्ण तृप्त करके फिर इनकी मत सुनो नहीं तो इनका दुराग्रह दुर्गति में डाल देगा। मन में इन्द्रियों के विषय में सोचना बन्द कर दो। मन को बुद्धि के हवाले कर दो ताकि वह मनमानी न कर सके। इस स्थिति में केवल बुद्धि का शासन चलेगा। बुद्धि विवेक की जननी है। इससे ठीक काम लेने के लिए आत्मा को अर्पित कर दो। आत्म चिन्तन के निरन्तर अभ्यास से आत्मज्ञान होता है। आत्म कल्याण इसी प्रकार सम्भव है। यदि विचारधारा दिव्य रूप धारण कर ले तो सफलता समझो। ऐसा पुरुष दिव्य हो जाता है, उसे भौतिक भूख पीड़ित नहीं करती; ऐसा लगता है कि हमने सब कुछ प्राप्त कर लिया है। हमारे ज्ञान तन्तु एकजुट होकर परमैश्वर्य को प्राप्त करने के लिए पूरी शक्ति लगा देते हैं। सन्तों में इस दिव्यता के दर्शन होते हैं। वे पहले वितरण करते हैं तब स्वयं ग्रहण करते हैं फिर कभी वासना नहीं व्याकुल करती। दिव्य भावना की कसौटी है त्यागपूर्वक भोग। अन्दर से ऐसा रस प्राप्त होता है कि बाह्य जगत् फीका-फीका सा लगता है। जो बच्चे मां से दूध पीते हैं उन्हें दूसरा दूध रूचिकर नहीं लगता। हम भी यदि उस आनन्दरस का पान कर लें तो फिर दूसरा रस अच्छा नहीं लगेगा। वह लोक दूसरा ही होता है, अन्धकार से दूर।

यत्र ज्योतिरजस्रं य यस्मिँल्लोके स्वर्हितम्।
तस्मिन् मां धेहि पावनमानामृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव॥

ऋ० ९.११३.७

ऐसा वह धाम जिसमें निरन्तर ज्योति प्रकाशित होती है, जिसमें सुख ही सुख (स्वर्ग) है। वह अमृतमय तथा क्षयरहित (अविनाशी) लोक है। परमपावन परमात्मा से प्रार्थना है कि उस आनन्दमय लोक में हमें सर्वदा रखे। हमारी भूल यह होती है कि हम स्वर्ग-अपवर्ग मांगते हैं, परन्तु उस दाता को भूल जाते हैं। यदि हम उसकी खोज करें तो फिर संसार में भटकना नहीं पड़ेगा। परमात्मा स्वर्ग का धाम है हम उस स्वर्गधाम को ही प्राप्त करें।

पृष्ठ 2 का शेष-ऋषियों का.....

धर्म की सात्विकता प्रभु नियमों से प्रेरित आत्मिक विश्वास पर आश्रित है। यह आत्मिक विश्वास प्रभु व्यवस्था के प्रकाशक सत्य, अहिंसा, दया, न्याय, करूणा, ज्ञान सेवा आदि शब्दों के भावार्थ से संबंधित मानवीय कर्मों पर आश्रित है। आदर्श विश्वास कोई वस्तु रूप नहीं व्यवहार भाव है। सात्विक भावना का प्रत्यक्षीकरण आदि शब्द ज्ञान वेद से ही संभव है। जैसे सूर्य समस्त मूर्तिमान पदार्थों का प्रकाशक है। वैसे ही सनातन वेदवाणी, सत्य व्यवहार और भावों की प्रकाशक है। 'स' अर्थ अमृत 'त' मृत्यु 'य' अर्थ जीव व प्रकृति दोनों को नियम में रखने वाला शब्द 'सत्य' ही जीवन के उच्चतम आदर्श की घोषणा करता है। शब्द के न्यूनातिन्यून परिवर्तन से अर्थ का अनर्थ और क्रिया विनाशक अर्थ हो जाता है। उदाहरणार्थ न अर्थ नहीं-नः अर्थ हमारी, स्वजन-अपना परिवार, श्वजन-कुत्तों का परिवार। मध्यकाल में अज नाम अन्न के स्थान पर-छाग अर्थ और आलभते अर्थ-धारण करना के स्थान पर-होमना अर्थ करके मध्यकाल से यज्ञों में पशु हिंसा का प्रादुर्भाव किया गया।

किन्तु वेदवेत्ता दयानन्द ने प्राचीन ग्रन्थों की साक्षी से ''वेदारम्भ संस्कार में'' अथास्य दक्षिणा समाधि हृदयालभते'' विवाह संस्कार में ''वरो वध्वा दक्षिणा समाधि हृदयालभते''। वेदारम्भ और विवाह संस्कार में आलभते अर्थ होमना कर दे तो अर्थ से अनर्थ हो जाए। और ''न तस्य प्रतिमा अस्ति'' आदि का वेदसम्मत महाभाष्य और यास्कमुनिप्रणीत प्रकरणानुसार अर्थ करके यज्ञों में हो रही पशु हिंसा और मूर्ति पूजा को अवैदिक सिद्ध कर दिया। ''समान प्रस्वात्मिका जाति'' (न्याय दर्शन) प्रभु व्यवस्था में जन्म ही जाति का आधार है कर्म नहीं ''वर्णोतु वर्णे'' अर्थात् स्वयं गुण, कर्म, स्वभाव द्वारा उन्नति के मार्ग को धारण करना ही वर्ण यथा स्त्री-पुरूष, गाय, घोड़ा आदि कहलाता है। जो आलस्य, भाग्यवाद और जन्म जातिवाद का विरोधी स्वाभिमान और पुरूषार्थ का प्रतीक है।

आर्य राष्ट्र के नाम को सार्थक व सुशोभित करने वालों आर्य भद्र पुरूषों यथा नाम तथा गुण-ज्ञान और आचरण ही हमारी वैदिक संस्कृति का मूल मंत्र रहा है।

किन्तु आज हम भौतिक चकाचौंध में धर्म और विज्ञान सम्मत वैदिक संस्कृति को छोड़ मानवीय मर्यादा और चरित्र के स्थान पर भौतिक उन्नति और सुखों को सर्वोपरि मान बैठे हैं। जबकि भौतिक संसार के लाभ-हानि, अच्छा-बुरा, विश्वास-अविश्वास, सत्य-असत्य आदि आत्मिक धर्म सत्ता के परिणाम सौंतिक शब्द व्यवहार के आश्रित हैं। महाभाष्यकार का कथन है-''एकः शब्दः सम्यग ज्ञातः सम्यक प्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुग् भवति।'' क्योंकि शब्द के साधु प्रयोग से धर्म और असाधु प्रयोग से अधर्म उत्पन्न होता है।

नाम की ध्वनि में वस्तु सत्ता के गुण हमारे कर्तव्य और अधिकारों की घोषणा ही विधाता का विधान है। यह विधान सार्वभौम और सर्वहितकारी है। शब्द का अर्थ से अर्थ का भाव से संबंध निर्विवाद है। यह भाव ही प्रार्थना का आधार है। इस प्रकार शाब्दिक प्रार्धना का अर्थ प्रभु मर्यादा का जानना, मानना और मनवाना है। शब्द भाव ही शब्द का रक्षक है। हमारा रक्षक है। सृष्टि का रक्षक है। जन्म जन्मांतरों के स्मृति संस्कारों को सुरक्षित रखने में शब्द ही सक्षम हैं। अन्य साधन सीमाब हैं, विनाशशील हैं। अतः शब्द ही सनातन है। सांसारिक पदार्थ मूर्ति आदि भी नहीं। पदार्थ भी नाशवान है।

शब्द के अध्यात्म भाव और भावानुसार भौतिक क्रिया को जाने बिना सुखों की प्राप्ति असंभव है। शब्द के सनातन भावार्थ वैदिक संस्कृति से ही प्राप्त किए जा सकते हैं।

आओ पूर्णानन्द प्राप्ति के लिए ऋषियों के ब्रह्मास्त्र वैदिक वाणी वेद को अपनाकर जीवन को सार्थक करें।

पृष्ठ 4 का शेष-स्वाध्याय से.....

ध्यान में जब ध्याता इतना मग्न व तल्लीन हो जाता है कि उसे अपना अर्थात् वह ध्यान कर रहा है, इसका किंचित भी ज्ञान न रहे और केवल उसका ध्येय ही उस स्थिति में उसके सम्मुख उपस्थित या भासमान् हो, उसे समाधि कहा जाता है। इसे यह भी कह सकते हैं कि ध्यान की निरन्तरता जिसमें ध्याता को अपना ज्ञान न रहे और ध्येय का ही आभास निरन्तर बना रहे, वह समाधि की अवस्था है। इस समाधि की अवस्था में ही आत्म साक्षात्कार एवं ईश्वर का साक्षात्कार होता है। ईश्वर का साक्षात्कार क्या है, यह जीवन के उद्देश्य की पूर्ति का होना है। मानव जीवन की सफलता है। जन्म-मरण रूपी दुःखों की सर्वथा निवृति व मुक्ति की प्राप्ति है। इस मुक्ति या मोक्ष की अवस्था की कालवधि 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों = 31,10,40,00,00,00,000 वर्ष है। इस सुदीर्घ अवधि तक मुक्त हुआ जीवात्मा पूर्ण आनन्द को प्राप्त रहता है। समाधि अवस्था में ईश्वर अपने स्वरूप का जीवात्मा को प्रकाश करता है। इस अवस्था में ईश्वर का आनन्द जीवात्मा में इस प्रकार प्रवाहित होता है जैसे तेज वर्षा में कोई भीग रहा हो या झरने की धारा में नीचे बैठा हुआ हो अर्थात् झरने के जल से सर्वांग शीतलता का अनुभव हो रहा हो। मुण्डक उपनिषद् के 40वें श्लोक-'भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।' में कहा गया कि ईश्वर का साक्षात्कार अथवा अपने आन्तरिक ज्ञान-चक्षुओं से दर्शन हो जाने पर हृदय की सभी गांठें व ग्रन्थियां खुल जाती हैं, सभी संशय मिट जाते हैं, दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं और तब उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, उसमें वह जीवात्मा निवास करता है। ईश्वर के साक्षात्कार के बाद जब मृत्यु आती है तब जीव जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होकर मुक्ति में चला जाता है। मुक्ति का लाभ व सुख ऐसा है जिसकी उपमा में कोई सांसारिक सुख या पदार्थ नहीं है। हां, यह तो कह सकते हैं कि सांसारिक सुख मुक्ति के सुख की तुलना में हेय ही है। यह मुक्ति विवेकशील कुछ ही लोगों को प्राप्त होती है। हम यह अनुमान करते हैं कि अतीत में यह योगेश्वर कृष्ण, मर्यादा पुरुषोत्तम राम, महर्षि दयानन्द सरस्वती, इनसे पूर्व हुए सन्त, ऋषि-महर्षि व योगियों को प्राप्त हुई होगी। प्रत्येक समझदार व ज्ञानी मनुष्य को वेद मार्ग पर चल कर मुक्ति की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए।

स्वाध्याय के लिए उपयोगी ग्रन्थों का उल्लेख भी हम कर देते हैं। इनके अतिरिक्त भी बहुत से ग्रन्थ हैं जो पढ़ सकते हैं। इसका चयन व निर्णय प्रत्येक व्यक्ति अपने विवेक से कर सकता है। सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, योगदर्शन पर अनेक आर्य विद्वानों के भाष्य प्रमुख 11 उपनिषद्, 6 योग-सांख्य-वेदान्त-वैशेषिक-न्याय-मीमांसा दर्शन और इन पर आर्य विद्वानों यथा पंडित उदयवीर जी शास्त्री आदि के भाष्य, मनुस्मृति, चारों वेदों पर महर्षि दयानन्द एवं आर्य विद्वानों के भाष्य आदि-आदि। इनके अतिरिक्त महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र जो स्वामी सत्यानन्द, पंडित लेखराम व देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा लिखित है, उपयोगी हैं। हमने यहां न्यूनतम् ग्रन्थों का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त अनेक ग्रन्थ हो सकते हैं जिनका स्वाध्याय उपयोगी हो सकता है। इसका निर्णय प्रत्येक स्वाध्यायशील व्यक्ति स्वमति से कर सकता है।

हमने स्वाध्याय से ध्यान, समाधि, ईश्वर की प्राप्ति व साक्षात्कार एवं मुक्ति का जो वर्णन किया है, इससे यदि किन्हीं को कुछ लाभ प्राप्त होता है तो हम अपने इस प्रयास को सफल समझेंगे।

हम विषयों से उठ ज्ञानोत्कर्षों से ज्ञान पावें

डा. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी, गाजियाबाद

हम सदा यह यत्न करें कि विषयादि हमें हानि न कर पावें, हम इन से ऊपर उठें और वर अर्थात ज्ञान के क्षेत्र में उत्कृष्ट, अद्वितीय ज्ञानियों के पास जावें, उन का सान्निध्य प्राप्त कर उन से ज्ञान प्राप्त करें। इस तथ्य को जानने के लिए इस मन्त्र पर इस प्रकार विचार करें :

परोहि विग्रम्स्त्रतमिन्द्रं प्रच्छा विपश्चितम।
यस्ते सखिभ्य आ वरम॥ ऋग्वेद १.४.४॥

विगत मन्त्र में ज्ञान की प्रार्थना की गई थी। यह मन्त्र तीन बातों की ओर संकेत करते हुए बता रहा है कि :-

१. हे मानव ! तू विषयों से दूर हो। संसार में जितने प्रकार के भी भोग हैं, विषय हैं, उन सब से हम दूर हों, उन सब से बचें। इस के साथ ही जितने भी काम हैं, उन से भी हम सदा दूर रहें। इस प्रकार हम ऐसे मेधावी पुरुष को प्राप्त करें, जो काम-क्रोध आदि दोषों से मुक्त हो।

आज संसार में बहुत से दोष व्याप्त हो चुके हैं तथा बहुत से ऐसे लोग भी शिक्षक बन गये हैं जो इन विषयों में, इन वासनाओं में, इन काम-क्रोधादि में फंसे हुए हैं। इन बुराईयों से जो लोग स्वयं ही घिर रहे हैं, वह हमें अथवा हमारी सन्तान को ज्ञान क्या देंगे, मार्ग क्या दिखावेंगे ? अर्थात् कुछ भी नहीं। जब वह स्वयं ही दोषों के गुलाम हो चुके हैं, ऐसे व्यक्ति यदि शिक्षक होंगे तो अपने शिष्य को कुमार्ग गामी बनाने के अतिरिक्त वह कर भी क्या सकते हैं ? यदि वह शराबी हैं तो अपने शिष्य को भी शराबी ही तो बनावेंगे। आज ऐसे अनेक उदाहरण भी मिल रहे हैं जब कोई व्यंसनी अध्यापक अपने विद्यार्थी के साथ घृणित अवस्था में पकड़ा जाता है। वह शिक्षा दे ही नहीं सकता।

इस सब को देखते हुए ही मन्त्र कह रहा है कि हम किसी ऐसे व्यक्ति से शिक्षा, ज्ञान प्राप्त कर मेधावी बनें, जो काम-क्रोध से दूर हो, जो अहिंसक हो तथा जो संयमी जीवन व्यतीत करने वाला हो। ऐसे श्रेष्ठ पुरुष से शिक्षा पा कर ही हम ज्ञान प्राप्त करने का यत्न करें।

२. हम परमात्मा के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम जिससे यह ज्ञान प्राप्त करने के लिए, उस के समीप जाते है, यदि वह प्रकृति के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञान नहीं रखता, यदि वह कुछ अल्प सा ज्ञान रखता भी है तो बारीकी नहीं है। ऐसा व्यक्ति प्रभु सम्बन्धी क्या ज्ञान दे पावेगा ?

कुछ भी तो नहीं। वह परमपिता की कृति को समझने के लिए प्रकृति का चिन्तन करने वाला हो वह प्रकृति को महानता से समझने वाला हो, वह प्रकृति को देखकर ही समझ जावे कि हमारे उस पिता की महिमा कैसी है ? उस महिमा को जानने वाला हो तथा इस प्रकार की महिमा का चिन्तन जो करता हो, ऐसे ही व्यक्ति से उस पिता सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने की हम कामना रखें,

३. जिस से हम ने ज्ञान प्राप्त करने का निश्चय किया है, उसकी परख भी प्रमुखतया करना आवश्यक है। हमारे एक भजनोपदेशक गाया करते हैं :

ठोक बजा के
ठोक बजा के गुरु नूं पहले वेख लो
गुरु दे लायक गुरु है, पहले वेख लो।...

इस पंक्तियों के रचयिता पण्ड़ित विजयानन्द जी कहते हैं कि जिस से हम ज्ञान प्राप्त करने जा रहे हैं, उस गुरु को पहले अच्छे से टटोल लेना चाहिये ताकि हमें पता चले कि वह इस प्रकार का ज्ञान देने के योग्य है भी या नहीं। यदि हमारी परख पर गुरु खरा उतरता है तो हम उसके चरणों में बैठकर ज्ञान प्राप्त करें अन्यथा ऐसे व्यक्ति के पास जाकर समय नष्ट न करें। इस तथ्य पर ही यहां मंत्र अपने तृतीय व अन्तिम खण्ड में आदेश कर रहा है कि हम पहले गुरु के बारे तथा उस के ज्ञान के बारे में परीक्षण कर लें, यदि वह हमारी परख पर खरा उतरता है, तब ही उसके चरणों में जावें, तब ही उस से ज्ञान की प्राप्ति आरम्भ करें।

जिस आचार्य के पास हम ज्ञान पाने के लिए जाते हैं, वह आचार्य अपने इस शिष्य का पहले उपनयन बनता है अर्थात दो आंखें तो इस बालक के पास हैं ही, एक तीसरी आंख उप नेत्र के रूप में वह आचार्य स्वयं को बना कर इस नव आगन्तुक बालक को देखने की अत्यधिक शक्ति उपलब्ध कराता है। वह अपना यह नेत्र, अपनी यह तीसरी आंख इस बालक के लिए कैसे बनता है ? इस सम्बन्ध में बताया गया है कि वह बालक का उपनयन संस्कार करता है। यह उपनयन संस्कार क्या है ? जब कोई बालक गुरु के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाता है तो सब से पहले गुरु इस बालक का एक संस्कार करता है। यह संस्कार करते हुए, वह बालक को कुछ उपदेश देता है तथा कुछ व्रत, कुछ प्रतिज्ञाएं लेता है। और इसके साथ ही उसके गले में तीन तारों वाला एक ऐसा धागा डालता है जिसके प्रत्येक धागे के भी तीन तार होते हैं। इस धागे का नाम होता है "यज्ञोपवीत" इस को ही उपनयन भी कहते हैं। इस संस्कार का नाम ही उपनयन संस्कार है। यह धागा वस्त्रों के ऊपर डाला जाता था, जिसे देखते ही पता चलता था कि यह बालक ज्ञान प्राप्त करने के लिए कर्म कर रहा है। इस प्रकार उपनयन के पश्चात यह आचार्य इस बालक अथवा बालकों को ज्ञान का आयन का कार्य आरम्भ करता है, इस प्रकार वह बालकों को ज्ञान देना आरम्भ करता है।

माता कृष्णा महाजन का देहावसान

आर्य समाज संगरूर के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री अश्वनी महाजन की माता एवं स्वर्गीय श्री शिवराम महाजन की धर्मपत्नी श्रीमती कृष्णा महाजन का दिनांक 31-5-2013 दिन शुक्रवार दोपहर 11-15 बजे आकस्मिक निधन हो गया। वह लगभग 78 वर्ष की थीं। 31-5-2013 सायं 6.30 बजे उनका अन्तयेष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से पंडित शैलेश शास्त्री पुरोहित आर्य समाज मन्दिर संगरूर के द्वारा सम्पन्न हुआ। जिसमें नगर के धार्मिक व सामाजिक संस्थाओं के अलावा आर्य समाज धूरी के प्रधान महाशय सोमप्रकाश जी आर्य विशेष रूप से पधारे तथा अन्त्येष्टि संस्कार में भाग लिया।

-मंत्री आर्य समाज मन्दिर, संगरूर

लुधियाना में विशेष सत्संग का आयोजन

दिनांक 23 जून 2013 रविवार को सायं 4.30 बजे से 7.00 बजे तक दयानन्द पब्लिक स्कूल लुधियाना में आर्य समाज पार्क लेन द्वारा विशेष सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें सर्वप्रथम श्री श्रवण बत्रा जी ने यज्ञ सम्पन्न करवाया। इसके उपरान्त मनोहर भजन हुए। परोपकारिणी सभा अजमेर के कार्यकारी प्रधान प्रो. धर्मवीर जी का राष्ट्र को कैसे बचाएं पर प्रवचन हुआ। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा कि इस देश का सनातन धर्म वैदिक धर्म था। अत: प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह अपने धर्म व आस्था की रक्षा करें। इसलिए हम सबको चाहिए कि हम जन-जन तक वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए संगठित होकर प्रयास करें और अपने संगठन को मजबूत करें। इस आयोजन में लुधियाना की समस्त आर्य समाजों के सदस्य सम्मिलित हुए। **-विजय सरीन**

वेद वाणी

य ईं चकार न सो अस्य वेद य ईं ददर्श हिरुगिन्नु तस्मात्।
स मातुर्योना परिवीतो अन्तः, बहुप्रजा निर्ऋतिमा विवेश॥

ऋ० १/१६४/३२; अथर्व० ९/१०/१०

विनय-मनुष्य संसार-सागर में डूबता जाता है। मनुष्य ज्यों-ज्यों 'बहुप्रजा' होता जाता है त्यों-त्यों वह 'निर्ऋति' में-घोर कष्ट में-पड़ता जाता है। विषयग्रस्त हुआ मनुष्य इस संसार में एक ही कार्य समझता है-अपने बच्चे पैदा करना, एवं प्रकृति में अपने विस्तार को नाना तरह बढ़ाता जाता है। इसीलिए वह बार-बार जन्म पाता है, बार-बार जन्म के घोर कष्टों को अनुभव करता है। ऋषि लोगों ने देखा है कि माता की योनि में आए हुए जीव को बार-बार बड़ा भारी मानसिक क्लेश भोगना पड़ता है। उस समय वह जीव केवल झिल्ली से ढका हुआ नहीं होता, किन्तु घोर अज्ञान से भी ढका हुआ होता है, क्योंकि 'बहुप्रजाः' के मार्ग पर जाना अज्ञान से ढके जाने से ही होता है। मनुष्य 'ढका हुआ' (परिवीत) होने से ही इस संसार में पागल तथा अंधे की तरह रहता है। मनुष्य पागल इसलिए है, चूंकि वह जो दिन-रात अन्धाधुन्ध काम करता है उसे वह जानता नहीं, यूं ही करता जाता है। मनुष्य खाना-पीना, चलना-फिरना, प्रेम करना, द्वेष करना आदि जो कुछ करता है उसे वह कुछ भी नहीं जानता कि मैं यह क्या कर रहा हूं, क्यों कर रहा हूं, इसका क्या प्रभाव होगा। वह नहीं जानता कि इसका फल उसे भोगना ही होगा। वह नहीं जान पाता कि पहले जन्मों में वह क्या-क्या कर चुका है। अन्धाधुन्ध वह करता जाता है। इसी तरह का उसका सब संसार को देखना है। संसार में वह मनुष्य स्त्री, पशु, पहाड़, नदी, आकाश, सभा, समाज, बड़े-बड़े आनन्ददायक दृश्य और बड़े-बड़े रुलाने वाले दृश्य, इन सबको सोते-जागते देखता जाता है, पर असल में वह इन किन्हीं भी वस्तुओं को नहीं देखता। ये सब वस्तुएं उससे वास्तव में छिपी ही रहती हैं, निः सन्देह छिपी ही रहती हैं। वह देखता हुआ भी किसी भी वस्तु का तत्त्व नहीं देख पाता। इसीलिए वह 'बहुप्रजाः' होने के-प्रकृति में ग्रस्त होने के-मार्ग में अवलम्बन करता है और 'निर्ऋति' में पड़ता जाता है। निर्ऋति (पृथिवी) के इस अन्धकार में धंस जाने की जगह, मनुष्य 'द्यौः' के प्रकाश की तरफ जाने लगे, यदि वह इस संसार में जो कुछ करे उसे जानने लगे और जो कुछ देखे उसे साक्षात् करने लगे।

-साभार वैदिक विनय, प्रस्तुतिः रणजीत आर्य

परीक्षा परिणाम घोषित

आर्य प्रतिनिधि सभा जालन्धर (पंजाब) के अधीन चल रही हमारी संस्था आर्य माडल हाई स्कूल मोगा का दसवीं परीक्षा का परिणाम घोषित हुआ। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के संरक्षण में चल रही इस संस्था का परिणाम शत-प्रतिशत रहा जो कि हमेशा की तरह शानदार व सराहनीय रहा।

विभा तायल पुत्री श्री वरिन्द्र कुमार तायल ने 596/650 अंक प्राप्त करके पहला स्थान प्राप्त किया। गुरिन्द्र सिंह सुपुत्र सरदार बचित्र सिंह ने 594/650 अंक लेकर द्वितीय स्थान व कनिका सूद सुपुत्री श्री विकास सूद तथा आशीष जिन्दल सुपुत्र श्री युद्धवीर जिन्दल ने 585/650 अंक लेकर स्कूल में तृतीय स्थान प्राप्त किया। 33 बच्चों ने 80% से ऊपर अंक प्राप्त किए।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

100 गुरुकुल शताब्दी

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।